P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-7* (Part-2) March- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

कलाल जाति के मूल कलचुरि वंश की शाखाएँ : एक समीक्षा

सारांश

कलाल जाति के मूल कलचुरि वंश का उद्भव मनु से माना जाता है। इसका प्रारंभिक वंश हैययवंश के नाम से विख्यात रहा। कलाल जाति में अनेक प्रसिद्ध राजा व योद्धा हुए, जिन्होंने यथासमय इस वंश के प्रचार–प्रसार में अपना अद्वितीय योगदान दिया तथा कलचुरी वंश की विभिन्न शाखाओं को प्रारंभ किया। पुराणों में भी इस संदर्भ में प्रमाण प्राप्त हुए हैं कि इस वंश का प्रसार प्राचीनकाल में संपूर्ण भारतवर्ष में था। रामायण, महाभारत तथा इतिहास आदि में भी इस वंश का विशेष उल्लेख प्राप्त होता है। कलचुरि की शाखाओं के रूप में हैययवंश, कलचुरि त्रिपुरी शाखा, त्रैकूटक हैययवंश, रतनपुर शाखा, रायपुर शाखा, कल्याणी शाखा, कल्यपाल शाखा आदि का वैशिष्ट्य कलाल समाज को विशेष महत्व प्रदान करता है।

मुख्य शब्द :कलाल जाति, हैययवंश सहस्रार्जुन, चेदिवंश, त्रैकूटक हैययवंश, गांगेयदेव, कर्णदेव, कलचुरिवंश, कल्यपालवंश, त्रिपुरी शाखा, कोक्कलदेव, रायपुर शाखा, कल्याणी शाखा, कार्तवीर्यार्जुन आदि।

ललित कुमार मेवाड़ा
शोधार्थी,
इतिहास विभाग,
रतन लाल कवंर पाटनी
राजकीय महाविद्यालय,
मदनगंज–किशनगढ़, अजमेर,
राजस्थान, भारत

मानक जैन
सहायक आचार्य,
इतिहास विभाग,
सम्राट पृथ्वीराज चौहान
राजकीय महाविद्यालय,
अजमेर, राजस्थान, भारत

प्रस्तावना

कलाल जाति का मूल वंश हैयय वंश माना जाता है। कालान्तर में यह वंश अनेक शाखाओं में बंट गया। ''हैयय कुल का प्रारंभ वेवस्वत मनु से है। महाराज यदु, ययाति, सहस्रजीत, हैयय इसी वंश में हुए। इसी क्रम में महाराज सहस्रबाहु अर्जुन का नाम आता है।[1]

विषय विस्तार

सहस्रार्जुन के सौ पुत्र हुए, जिनमें पाँच अत्यन्त प्रसिद्ध हुए–जयध्वज, शूरसेन, वृषभ, मधु और आर्जव। ये पाँचों युद्ध में मारे गये। जय ध्वज के तालजंघ हुआ और इसके भी सौ पुत्र हुए। ये सभी हैयय तालजंघ नाम से विख्यात हुए, जो किसी प्रकार बच गए। महाभारत का आदि पर्व बताता है कि परशुराम के महेन्द्र पर्वत पर जाने के बाद तालजंघ पुनः शक्तिशाली हो गये और अपना राज्य स्थापित किया। तालजंघों ने परशुराम के अत्याचारों का बदला लेना प्रारम्भ कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि भृगुओं में ही और्व नामक ऋषि ने परशुराम जैसा उग्र रूप धारण किया और तालजंघों को विन्ध्याचल पर्वत पर भगा दिया।

''पुराणों के अनुसार इन्हीं तालजंघों में से बाद में पाँच कुल शौण्डिकेय, स्वयंजात, अवन्ति, वीतिहोत्र और भोज विख्यात हुए, जिन्होंने अपने नाम से देश बसाये। भागवत के अनुसार इन्हें जयध्वज, माधव, वृष्णीय इन तीन नामों से पुकारा जाने लगा, ये तीनों नाम एक ही कुल के बोधक हैं। तालजंघ के बड़े पुत्र का नाम वीतिहोत्र था और उनके पुत्र अनन्त और दुर्जय हुए। ऋग्वेद के अनुसार वीतिहोत्र ब्राह्मण हो गए और इनका नाम वीतिहव्य हो गया और ये इसी नाम से प्रसिद्ध हुए और एक बड़े ब्रह्मर्षि हुए। इनके पुत्र गृत्समद भी एक विख्यात ऋषि हुए। इनके वंशज वेद वेदांत के ज्ञाता हुए। इन्हीं के वंश में शुनक हुए, जिनसे शौनक नामक ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वंश के अनेक पुत्र हुए।''[2]

हैयय वंश के उपर्युक्त पाँचों कुलों का उल्लेख पुराणों में मिलता है। महाभारत, रामायण, इतिहास, पुराण आदि ग्रंथ स्थान–स्थान पर इस वंश के अस्तित्व का परिचय देते रहते हैं। हैयय वंश समूल कभी विनष्ट नहीं हुआ। ये भार्गवों के अत्याचारों से दुःखी होकर यत्र–तत्र चले गए और समय आने पर पुनः शासनारूढ़ हुए। इसकी चर्चा महाभारत के शान्ति पर्व, अध्याय 89 में मिलती है।[3] भार्गवों के अत्याचार और आंतक से दुःखी होकर हैयय वंशीय राजा राज्य छोड़कर वनों में चले गए। तब ब्राह्मणों ने राज्य की बागडोर अपने हाथ में सम्भाली। ब्राह्मण वर्ग शासन के कार्यों से पूर्णतः अनभिज्ञ था, अतः चारों ओर

त्राहि–त्राहि मचने लगी। सुख शान्ति और सुरक्षा समाप्त हो गई। पृथ्वी के नेतृत्व में ब्राह्मणों के नेता कश्यपजी के पास गए। पृथ्वी ने कश्यपजी से कहा, ''मैं राजा के बिना नष्ट हुई जाती हूँ। मैंने स्त्रियों में बहुत से राजवंश छिपा रखे हैं। हैयय वंश के क्षत्रिय स्त्रियों में छिपे हैं। इसी प्रकार अन्य अनेक क्षत्रिय विभिन्न स्थानों में छिपे हुए हैं। हैयय वंशीय वृहद्रथ चेदि में छिपा था। हैयय वंश की पाँच गर्भवती स्त्रियाँ उत्तर–पश्चिम की ओर चली गई और वहीं रहने लगी। संतानों ने बाद में अपने–अपने राज्य स्थापित किये और अपने को हैयय वंशीय कहते हुए अन्य नाम धारण कर लिए।''

हैयय चेदि वंश

हैयय वंशीय क्षत्रिय के पाँच कुल बहुत प्रसिद्ध हुए–तालजंघों के वीतिहोत्र, भोज, अवन्ति, शोण्डिकेय और स्वयंजात। इन्होंने देश के विभिन्न क्षेत्रों में अपने राज्य स्थापित किये। इनमें भोज ने सूर्यवंशी राजा सगर की मृत्यु उपरान्त उत्तर भारत पर आक्रमण किया और यमुना से ताप्ति तक के भाग को अपने अधीन कर लिया। हैयय वंशीय भोज चेदिवंशी कहलाने लगा। इनका राज्य कलिंग उड़ीसा तक फैल गया। ऋग्वेद के आठवें मण्डल में चेदि पुत्र कसू की उदारता का उल्लेख मिलता है। कसू हैयय वंशीय ही था। विदर्भ के भोजों में चक्रवर्ती सम्राट मधु की चर्चा पुराणों में है। इसी के प्रभाव के कारण यदु वंशीय माधव कहे जाने लगे।

चक्रवर्ती सम्राट मधु ने यदु वंश के समस्त जनपदों को संगठित कर एक महान् साम्राज्य की स्थापना की। अब समस्त यदुवंशीय, चाहे हैयय हो या भोज हों, चाहे चेदि हों, ये सभी माधव कहलाने लगे। ई.पू. छठी शताब्दी में सोलह महाजनपदों में चेदि जनपद का भी उल्लेख मिलता है। इसके अनुसार म.प्र. के बुंदेलखण्ड में चेदि राज्य था। शक्तिमती इसकी राजधानी थी। जातक ग्रंथों में चेदि नरेशों का उल्लेख मिलता है। चेदि राजा ब्रह्मविद्या में निपुण समझे जाते थे। गौतम बुद्ध के जन्मकाल में हैययवंशीय चेदियों की अच्छी उन्नति हुई। इनकी धाक उत्तर व दक्षिण भारत में समान थी। ''चौथी शताब्दी ई.पू. चेदि और मत्स्यदेश को मिलाकर इनके राज्य का विस्तार हुआ और नेपाल तथा कौशाम्बी के राज्य को भी अपना उपनिवेश बनाया। अशोक के पिता बिन्दुसार के समय चेदियों का उत्कर्ष कम हो गया। चेदियों का कुछ भी महत्व न रहा। अशोक का शासनकाल हैययवंशीयों के लिए अस्तांचल का काल था। बौद्ध धर्म के अनुयायियों का बोलबाला था। शैव और शाक्त धर्मावलम्बियों का अस्तित्व नहीं रह गया था। चेदि हैययवंशीय शैव थे।''[4]

त्रैकूटक हैयय वंश

''थॉम्पसन के अनुसार नलध्वज वाली शाखा में ही आगे चलकर ईश्वरदत्त हुए। इन्होंने चेदि संवत् चलाया। इन्होंने पश्चिमी और पूर्वी चेदियों को संगठित किया और शकों की बढ़ती शक्ति को रोक दिया। इसी विजय के उपलक्ष्य में इन्होंने अपने वंश के नाम से 306 वि.सं में चेदिय संवत् चलाया, जो आगे चलकर कलचुरि संवत् के नाम से विख्यात हुआ। इन्होंने अपने नाम के सिक्के भी चलाए, जिन पर संवत् का प्रथम और द्वितीय वर्ष अंकित है। चेदि वंशीय कोकन जाकर वहाँ राज्य करने लगे और त्रिकूट नगर को अपनी राजधानी बनाया। इसलिये चेदि लोग त्रैकूटक कहलाए। इन्द्रदत्त के पुत्र दहरसेन थे। इन्होंने इन्द्र की उपाधि त्यागकर 'सेन' उपाधि ग्रहण की। इन्होंने अश्वमेध यज्ञ किया और सिक्के भी चलाए। कालान्तर में उनके पुत्र व्याघ्रसेन ने भी पिता का अनुसरण किया और अपने नाम के सिक्के चलाए। त्रैकुटकों ने अनेक उतार–चढ़ाव देखे। कालान्तर में त्रिपुरी पर अधिकार कर कलचुरि कहलाए।''[5]

कलचुरी वंश (त्रिपुरी शाखा)

''यह हैहय वंशीय कलचुरि के नाम से विख्यात हुए। सम्भवतः चन्द्रचूड़ या कलाचूड़ शिव के उपासक होने के कारण यह कलाचूर्य का कलचुरि कहलाए। यह नाम इनको जनता की ओर से प्राप्त हुआ। राजधानी त्रिपुरी की उपमा इन्द्र की राजधानी अमरावती से दी जाती थी। ऋग्वेद– काल में चेदि नरेश बड़े दानी, उदार, बल, पराक्रम तथा वैभव में सम्पन्न थे।''[6] महाभारत के युद्ध में उनकी सेना ने भी युद्ध में सम्मिलित होकर अपना युद्ध कौशल दिखाया था। हैयय वंशीय कलचुरि की एक शाखा ने डेढ़ हजार वर्षों तक अखण्ड राज्य किया।'' त्रिपुरी का वर्तमान नाम तेवर है, जो जबलपुर के निकट है। यहाँ पर करीब चालीस पचास शिलालेख व ताम्रपत्र प्राप्त हुए।''[7] उनकी वंशावली कोक्कलदेव के समय से प्रारम्भ होती है। प्रायः सभी में कलचुरियों की उत्पत्ति हैयय वंश से बतलाई गई है और सभी में मूल पुरुष, पितृ पुरुष कार्तवीर्य सहस्रार्जुन का नाम अंकित है। ''कोकलदेव (कलचुरि वंश का प्रथम शासक) का समय प्रायः 875 ई. के आसपास है। इस अवधि में इसका वैभव चरम पर था। ये भारत के सम्राट हो गए। इन्होंने अनेक राजाओं तथा रघुवंशियों को परास्त किया।''[8] बनारस के दान–पत्रों में इन्हें शास्त्रवेत्ता, धर्मात्मा, परोपकारी, दानी तथा भोज वल्लभराज तथा चित्रकूट के राजा श्री हर्ष और शंकरगण को निर्भय करने वाला लिखा है। इन्होंने अनेक राज्यों से मैत्री संबंध स्थापित किये। कोक्कलदेव का राज्यकाल सं. 920 से 960 तक के मध्य अनुमानित है। बारहवीं शताब्दी तक की वंशावली का पता इन ताम्रपत्र व शिलालेखों से चल जाता है। कोक्कलदेव के 18 पुत्र हुए सभी को एक–एक मण्डल दिए गए। सबसे बड़े पुत्र मुग्धतुंग को त्रिपुरी का राज्य मिला। वह सन् 900 ई. के आसपास सिंहासन पर बैठा। दक्षिण में मलाबार और पूर्व में बंगाल की खाड़ी तक विजय का डंका बजाया।

युवराज देव के पश्चात् उसका पुत्र लक्ष्मणराज राजा हुआ, जो 980 ई. में राजगद्दी पर बैठा। उसने कई विद्रोहों को दबाया और उड़ीसा के राजा से रत्नजड़ित स्वर्ण नाग की मूर्ति छीनकर सोमनाथ मन्दिर को समर्पित कर दी। इन्होंने लक्ष्मण सागर नामक तालाब अपनी माता की स्मृति में बनवाया। लक्ष्मणदेव के दो पुत्र हुए। बड़ा पुत्र शंकरगण और छोटा पुत्र युवराज देव जिसे चेदिचन्द्र भी कहा जाता है। शंकरगण का वर्णन इतिहास में नहीं मिलता है। चेदिचन्द ने अनेक राजाओं को युद्ध में परास्त किया और विजय में प्राप्त सम्पूर्ण भूमि (धन–दौलत) को सोमनाथ महादेव को अर्पित कर दिया। इनका पुत्र कोक्कलदेव द्वितीय भी बड़ा पराक्रमी था।

''कोक्कलदेव द्वितीय के पश्चात् उसका पुत्र गांगेय देव त्रिपुरी के राज सिंहासन पर बैठा। गांगेयदेव ने सम्पूर्ण उत्तर भारत को अपने अधीन कर लिया। उसने कांगड़ा, उड़ीसा, बंगाल के राजाओं को परास्त किया।''[9] दक्षिण में कुंतल देश को जीतकर पुनः राज्य वापस कर दिया। इन्होंने सोने, चाँदी और ताँबे के सिक्के चलाए, जिनमें एक ओर चतुर्भुजी लक्ष्मी और दूसरी ओर श्रीमद् गांगेय देव लिखा है। इन्होंने विक्रमादित्य की उपाधि धारण की। चंदेल लेखों में इन्हें 'जगद्विजयी' कहा गया है। चंदेलों को हराकर कालिंजर का किला जीतने पर इन्होंने 'कालिंजराधिपति' की उपाधि धारण की। सन् 1041 ई. में अपनी सौ रानियों सहित प्रयागराज में अक्षयवट के समीप मुक्ति प्राप्त की।

''गांगेयदेव का पुत्र कर्णदेव (1041–1070) अपने पिता से भी अधिक तेजस्वी ओर पराक्रमी था। उसने भारतवर्ष के सभी राज्यों पर आक्रमण किया और उन्हें अपने अधीन कर लिया। हूणों को हराकर हूण राजकुमारी से विवाह किया।''[10] 'रासमाला' में लिखा है कि 136 राजा उनके चरणों की पूजा करते थे। प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. काशीप्रसाद जायसवाल ने उन्हें 'भारतीय नेपोलियन' कहा है। यह राजा इतना प्रतापी हुआ कि कहावतों में 'कर्ण डहरिया' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उसने ऐसा प्रभाव जमाया कि आज भी लोग ''कर्ण डहरिया, कर्ण, जुझार, कर्ण हॉक जाने संसार'' कहकर उसकी कीर्ति का स्मरण करते हैं। ''कर्णदेव शैव था। उसने कर्णावती नगर बसाया तथा उसने काशी में बारह मंजिल के विशाल शिव मंदिर का निर्माण करवाया था।''[11] इनका दो बार राज्याभिषेक हुआ। पहला सन् 1041 में पिता के देहान्त के बाद और दूसरा सन् 1050 में जब वह सम्पूर्ण भारतवर्ष को जीतकर सम्राट बना। तब से उसका संवत्सर अलग से चलने लगा। कर्णदेव के पश्चात् उसके वंशज कमजोर हो गए और धीरे–धीरे सात आठ सौ वर्षों में कलचुरि सूर्य का अस्त हो गया।

कलचुरि वंश (रतनपुर शाखा)

रतनपुर प्राचीनकाल से ही गौरवशाली नगर तथा हैहयों की राजधानी रहा है। सातवीं शताब्दी में यह नगर बौद्ध शासकों के अधीन हो गया। ग्यारहवीं शताब्दी में रत्नराज ने हैहय वंशीय क्षत्रियों को एकत्र करके पुनः अपना अधिकार कर लिया। यहाँ पर महामाया का भव्य मंदिर बनवाया। ''रतनपुर को कुबेर की नगरी से उपमा दी जाती थी। द्वापर में महादानी, परम भक्त, उदार तथा पराक्रमी राजा मोरध्वज राज्य करते थे, जो हैहयवंशी थे। रत्नराज परम यशस्वी व पराक्रमी था। उसने कोमोमण्डल के राजा बज्जूक की पुत्री नोइल्ला से विवाह किया। इसका पुत्र पृथ्वीदेव प्रथम महाकौशल का राजा हुआ। इसके बाद जाजल्लदेव राज्याधिकारी हुए। यह कलचुरि वंश का महान पराक्रमी राजा हुआ। इन्होंने अनेक युद्ध लड़े और सभी में विजयश्री प्राप्त की।''[12] इन्हें अनेक राजा कर देते थे। इनके पराक्रम से प्रभावित होकर चेदि का राजा यशकर्ण, कन्नौज आदि के अनेक राजा इनके मित्र बन गए। इसने चालुक्य के राजा सोमेश्वर पर विजय प्राप्त की और अपने नाम से जाजल्ल नगर बसाया, जहाँ पर बाग, मठ, तालाब और जाजलेश्वर महादेव का मंदिर निर्माण करवाया।

रत्नदेव (जाजलदेव द्वितीय) भी अपने पिता के समान ही पराक्रमी था। इसने कलिंग देश के राजा गंग पर चढ़ाई की और युद्ध–भूमि में उसे परास्त किया। इसने अपने नाम के ताँबे के सिक्के चलवाए, जिसमें एक ओर श्रीमन् रत्नदेव लिखा है और दूसरी ओर हनुमानजी की मूर्ति है। इसके बाद पृथ्वीराज गद्दी पर बैठा। इसने भी सोने और ताँबे के सिक्के चलाए। इन सिक्कों पर एक ओर श्रीमद् पृथ्वीराज अंकित है और दूसरी ओर हनुमानजी की मूर्ति बनी है। यह मूर्ति कुछ पर द्विभुज और कुछ पर चतुर्भुज है। इस शाखा में तीन राजा इसी नाम से हुए थे। ये सिक्के किसके हैं, कहा नहीं जा सकता है। इसके बाद हैयय वंशियों का क्रमबद्ध इतिहास नहीं मिलता है।

सत्रहवीं शताब्दी में मुगल सम्राट अकबर के समय महाराजा कल्याणशाह का उल्लेख मिलता है, जो रत्नदेव की इक्कीसवी पीढ़ी के हैं। अकबर ने कल्याणशाह का राजसी स्वागत किया और मित्रता स्थापित की। अन्त में अठारहवीं शताब्दी में भोसले बंगाल पर आक्रमण करने निकले, तो रास्तें में रत्नपुर के किले पर चढ़ाई कर दी। वहाँ का राजा रघुनाथसिंह वृद्ध था। अतः मराठा सरदार भास्कर पंत ने रघुनाथसिंह को हटाकर उसी के रिश्तेदार मोहनसिंह को राजकाज सौंप दिया। कुछ समय पश्चात् राजा की कमजोरी के कारण मराठों ने उनसे भी राज्य छीन लिया।

रायपुर शाखा

इसमें कुल सत्रह राजा हुए, जिन्होंने 1420 ई. सन् से 1741 ई. सन् तक राज्य किया। शिलालेखों से ज्ञात होता है कि 14वीं शताब्दी के मध्य सिंहण ने 18 गढ़ जीते और राजधानी रायपुर नगर में स्थापित कर दी। रायपुरी शाखा की नामावली में ब्रह्मदेव तथा उसके पूर्वजों का नाम नहीं मिलता है। अमरसिंह देव हैयय कलचुरियों का अन्तिम राजा था, जिसको भोसले ने सन् 1750 में राजिम, रायपुर और पाटन देकर चुपचाप उसका राज्य हस्तगत कर लिया और उस पर 7000 रूपये वार्षिक कर लगा दिया। अमर सिंह सन् 1753 में स्वर्ग सिधार गया। सन् 1822 में गाँव पीछे रूपये देना बन्द कर दिया और उसके बदले में चार गाँव और माफी में दिये, जो जमींदारी उन्मूलन तक हैयय वंशीय क्षत्रियों के पास रहे।

कल्याणी शाखा

दक्षिण के कलचुरियों के शिलालेखों से पता चलता है कि कल्याण के कलचुरि चेदि के कलचुरियों के वंशज थे। उन्होंने चालुक्यों के राजा तैलप को हराकर वहाँ अपना राज्य स्थापित किया। इनका क्रमबद्ध इतिहास राजा जोगम के समय से ही मिलता है। मैसूर के विज्जल के शिलालेखों से मालूम होता है कि डाहल के कलचुरि राजा कन्नम (कृष्ण) के दो पुत्र थे– विज्जल और सिन्धुराज। विक्रम संवत 1219 ई. के लेख में विज्जल देव ने कई उपाधियाँ धारण की। विज्जलदेव के पश्चात् उसका पुत्र सोमेश्वर राजगद्दी पर बैठा। उसके बाद क्रमशः संकम, आहवमल्ल, सिंघण राजगद्दी पर बैठे। इन सभी राजाओं के समय के ताम्रपत्र मिलते हैं।

कल्याणी के कलचुरि राजाओं का सम्पूर्ण समय अपने विरोधी चालुक्य, यादव और होयसाल नरेशों से युद्ध करने में बीता। यादव नरेश जैन धर्म के विरोधी थे। उन्होंने जैन मंदिरों की भूमि शैव मंदिरों को दे दी। कलचुरियों का पूर्ण पतन होयसाल नरेश बल्लाल द्वितीय के हाथों हुआ। इनके पतन का कारण धार्मिक असहिष्णुता और कलचुरियों की आंतरिक छिन्न–भिन्नता थी। कलचुरि नरेश बड़े वीर थे। उन्होंने शत्रुओं को युद्ध में कभी आगे नहीं बढ़ने दिया। परन्तु बहुसंख्यक शत्रुओं के सामने नहीं ठहर सके और राज्य की रक्षा करने में असमर्थ हुए।

कश्मीर का कल्यपाल वंश

हैहय वंश अत्यन्त प्राचीन राजवंश है। संपूर्ण भारतवर्ष में इस वंश का विस्तार हुआ। शासन का केन्द्र मध्य भारत रहा। तथापि वे उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम चारों ओर फैले एवं अपने उत्थान–पतन के साथ ही जब भी अवसर प्राप्त हुआ, उन्होंने अपने पौरुष और पराक्रम से कई बड़े–बड़े राज्यों की स्थापना करके अपने पूर्वजों की कीर्ति और यश का विस्तार किया।

जिस समय कलचुरि वंश का सूर्य चमक रहा था, उस समय हैहयों की पश्चिम शाखा ने पंजाब से आगे बढ़कर काबुल, कंधार तथा कश्मीर में कई बड़े–बड़े राज्यों की स्थापना की। इन्होंने काबुल व कंधार में शाही वंश के नाम से तथा कश्मीर में उत्पल कल्यपाल वंश के नाम से सैकड़ों वर्ष तक शासन किया। 'राज–तरंगिणी' में कश्मीर के कल्यपालों का विशद् वर्णन है। चिन्तामण विनायक वैद्य के अनुसार उस समय काबुल कंधार के राजा 'हाहज' कहलाते थे। 'हाहज' हैहय का अरबी रूपान्तर है। इनका संबंध कश्मीर के कल्यपाल वंशीय राजाओं से था।

कल्यपाल वंशीय जिन राजाओं और रानियों के सिक्कों का उल्लेख पंडित गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने किया है, उनमें रानी दिद्दा का नाम भी आता है। कन्धार के राजा त्रिलोचनपाल शाह रानी दिद्दा के दादा थे। इससे शाही वंश और कल्यपाल वंश के एक होने की पुष्टि होती है। अतः कश्मीर के कल्यपाल, जिनका वर्णन राज तरंगिणी में है, हैहयवंशीय क्षत्रिय थे।

अध्ययन का उद्देश्य

कलाल जाति के आदि पुरुष सहस्रबाहु अर्जुन के जीवन का परिचय देते हुए इनके वंशजों का वर्णन किया गया है। कालान्तर में विभिन्न मुद्दों में विजय प्राप्त करते हुए तथा प्रशासनिक दक्षता का परिचय देते हुए किस प्रकार कलाल जाति के मूल वंश की अनेक शाखाएँ देश के विभिन्न भागों में स्थापित हुई, इस संबंध में कलाल समाज को ऐतिहासिक तथ्यों से अवगत करवाने के उद्देश्य से यह शोध पत्र प्रस्तुत किया गया है।

निष्कर्ष

उक्त शोध पत्र के माध्यम से कलाल समाज में प्राचीनकाल में विभिन्न शूरवीर योद्धाओं का परिचय, उनका शासनकाल, उनके द्वारा किए गए प्रतापी कार्यों से प्राप्त सीमाओं का ज्ञान, राजवंश का प्रसार, सामरिक विजय, शासन काल का समय, उपलब्धियाँ, विभिन्न उपाधियाँ, अन्य राज्य–राजाओं से संबंध के विषय में विशिष्ट जानकारी समाज हित में संकलित हो सकेगी।

अंत टिप्पणी

1. *श्री राजराजेश्वर कार्तवीर्यार्जुन पुराण–खंड एक–संकलनकर्ता–अशोक 'आनंद'–प्रकाशक–ए.के.राय एण्ड कम्पनी, जबलपुर–पृ.सं. 494*
2. *हैयय क्षत्रिय कलचुरि वंश की वैभवगाथा–लेखक फतहचंद गुप्ता–पृ.सं. 61*
3. *महाभारत, शांति पर्व अध्याय–89*
4. *सर्वकलाल समाज ज्योति–वर्ष 2016, प्रकाशक माणक मेवाड़ा*
5. *हैयय क्षत्रिय कलचुरि वंश की वैभवगाथा–लेखक फतहचंद गुप्ता–पृ.सं. 70*
6. *हैयय क्षत्रिय कलचुरि वंश की वैभवगाथा–लेखक फतहचंद गुप्ता–पृ.सं. 74*
7. *भारतीय इतिहास–लेखक–प्रेम प्रकाश ओला–प्रकाशक–आर्य कॉम्प. टाइम्स पृ.स. 118*
8. *भारतीय इतिहास–लेखक–प्रेम प्रकाश ओला–प्रकाशक–आर्य कॉम्प. टाइम्स पृ.स. 118*
9. *भारतीय इतिहास–लेखक–प्रेम प्रकाश ओला–प्रकाशक–आर्य कॉम्प. टाइम्स पृ.स. 118*
10. *भारतीय इतिहास–लेखक–प्रेम प्रकाश ओला–प्रकाशक–आर्य कॉम्प. टाइम्स पृ.स. 118*
11. *हैयय वंश की रूपरेखा–लेखक–राजेन्द्र कुमार जायसवाल, पी.आर.पी. प्रकाशन, मिर्जापुर, उत्तरप्रदेश पृ.सं. 18*
12. *हैयय क्षत्रिय कलचुरि वंश की वैभवगाथा–लेखक फतहचंद गुप्ता – पृ.सं. 73*